ऊर्जा नियोजन के लिए विश्लेषक बेस बनाने की ओर अग्रसर होना
Moving Toward an Analytical Base for Energy Planning

राधिका खोसला
Radhika Khosla
February 9, 2015

जलवायु परिवर्तन के संबंध में दिसंबर **2015** में प्रस्तावित संयुक्त राष्ट्रसंघ की शिखर वार्ता के संभावित परिणामों को लेकर सारी दुनिया में और भारत में भी अनेक अनुमान लगाये जा रहे हैं. उसकी तैयारी के लिए प्रत्येक देश को इस वर्ष के अंत तक शिखर वार्ता से काफ़ी पहले **INDC** अर्थात् "राष्ट्रीय तौर पर अपेक्षित निर्धारित योगदान" पर अपना पक्ष प्रस्तुत करना होगा. अमरीका-भारत के वर्तमान संबंधों के महत्व को देखते हुए जलवायु परिवर्तन के संबंध में भारत की प्रतिक्रिया को इसमें प्राथमिकता मिल सकती है. इसके अलावा, हाल ही में हुए अमरीकी-चीनी समझौते से यह संकेत भी मिलने लगा है कि जलवायु की प्रतिबद्धता के प्रति अन्य बड़े खिलाड़ियों के रवैये में परिवर्तन भी हो सकता है और इस कारण भी भारत को अधिक महत्व दिया जा सकता है. चूँकि अगले ही कुछ महीनों में भारत को **INDC** अर्थात् "राष्ट्रीय तौर पर अपेक्षित निर्धारित योगदान" पर अपने पक्ष को तय करना है, यही उचित अवसर है जब भारत ऊर्जा और जलवायु नियोजन के संबंध में अपनी दीर्घकालीन नीति पर विचार कर ले.

भारत के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण है कि वह अपने संभावित विकास पथ को निर्धारित करने के लिए ऊर्जा के उपयोग का विश्लेषण करे. साथ ही जलवायु परिवर्तन पर इन विकास पथों का प्रभाव भी लगातार बढ़ता जाएगा. इसके फलस्वरूप जलवायु परिवर्तन की दृष्टि से भारत की ऊर्जा संबंधी भावी आवश्यकताओं के परिदृश्य की जाँच के लिए कई तरह से अध्ययन किया जा रहा है. इस तरह के अध्ययन का उद्देश्य अर्थव्यवस्था की भावी प्रवृत्तियों, ग्रीन हाउस के गैस उत्सर्जनों **(GHG)** और ऊर्जा के क्षेत्र में नीतियों के संभावित प्रभाव के अनुमानों का पता लगाना है. ये अध्ययन ऐसे अनिवार्य तत्वों की तरह काम करेंगे जिनसे अधिकतम विकास और कार्बन की कमी लाने की संभावना वाले अर्थव्यवस्था के क्षेत्रों को चिह्नित करके ऊर्जा और जलवायु परिवर्तन संबंधी नीति के निर्माण के लिए आवश्यक मार्गदर्शन मिलेगा. परंतु नीति-निर्माण की प्रक्रिया के अध्ययन की उपयोगिता तभी होगी जब ये विश्लेषण सचमुच गंभीर होंगे. इसलिए विभिन्न मॉडलों के अध्ययनों की नीतिगत प्रासंगिकता के मूल्यांकन के लिए इसप्रकार की व्यापक समीक्षा बहुत लाभदायक होगी.

बृहत् आर्थिक मॉडलों के परिणाम टैक्नोलॉजी-परिवर्तन के बर्ताव से अच्छी तरह जुड़े हैं और टैक्नोलॉजी के बारे में लगाये गये अनुमान परिणामों के संकेत भी दे सकते हैं. मैक्रो "टॉप-डाउन" मॉडल, जो जीडीपी के मूल्यों और कार्बन डाई ऑक्साइड के उत्सर्जन के प्रक्षेप पथ जैसे अर्थव्यवस्थापरक व्यापक परिणाम देते हैं, आम तौर पर अर्थव्यवस्था में दो तरीकों से समय के साथ तकनीकी प्रगति का संचार करते हैं : "स्वायत्त ऊर्जा दक्षता सुधार" **(AEEI)** नामक उपाय से तकनीकी परिवर्तन लाकर ; और प्रौद्योगिकीय दक्षता से उत्पादन में वृद्धि करके या "कुल कारक उत्पादकता वृद्धि" **(TFPG)** के उपाय द्वारा संपुटित वर्तमान इनपुट के और अधिक कुशल उपयोग से. इस बात की छानबीन करना भी दिलचस्प होगा कि टैक्नोलॉजी से संबधित कुछ प्रेरक अनुमानों की तुलना ऊर्जा और जलवायु- नीति से संबंधित इस समय किये जा रहे प्रमुख अध्ययनों से की जा

सकती है. उदाहरण के लिए पूर्व योजना आयोग की सर्वसमावेशी वृद्धि **(LCIG)** की कम कार्बन वाली रणनीति संबंधी रिपोर्ट में कृषि क्षेत्र के लिए **1** प्रतिशत और गैर-कृषि क्षेत्र के लिए लगभग **1.5** प्रतिशत के कुल कारक उत्पादकता के वृद्धि-मूल्य का उपयोग किया गया है. लेकिन राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद **(NCAER)** द्वारा किये गये संलग्न अध्ययन में विभिन्न क्षेत्रों के **3** प्रतिशत कुल कारक उत्पादकता के वृद्धि-मूल्य का उपयोग किया गया है. जहाँ एक ओर विभिन्न संदर्भों में अलग-अलग अनुमानों का औचित्य तो सिद्ध होता है**,** वहीं इन अनुमानों तक पहुँचने की प्रक्रिया परिणामों पर निर्भर रहने वाले व्यापक नीति-निर्माता समुदाय के लिए हमेशा ही बहुत स्पष्ट नहीं होती.

हैरानी इस बात को लेकर नहीं है कि एक ही जैसे दो अध्ययनों के अर्थव्यवस्था पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से संबधित परिणाम अलग-अलग क्यों होते हैं. **LCIG** को देखने पर हमें लगता है कि आर्थिक आउटपुट या उत्सर्जन की तीव्रता की प्रत्येक इकाई के लिए उत्पन्न उत्सर्जन बिना किसी जलवायु संबंधी आक्रामक कार्रवाई **(**या **"**संदर्भ के मामले**"** में**)** के भी **2030** में **0.33 (GHG/$GDP** का कि.ग्रा.**)** है. दूसरी ओर **NCAER** ने कार्यपद्धतियों में अंतर का हिसाब लगाने के बाद अपने संदर्भ के परिदृश्य में **2030-31** में **0.13 (GHG/$GDP** के कि.ग्रा.**)** के उत्सर्जन की तीव्रता का अनुमान लगाया है. इस उदाहरण से सिर्फ़ यही पता चलता है कि ऊर्जा और जलवायु परिवर्तन के प्रति हमारे रुख में भी कुछ विचलन दिखाई पड़ता है.

राष्ट्रीय अध्ययनों में होने वाले विचलन के अलावा दूसरे प्रकार के अंतर ऐसे भी होते हैं जो भारत के सभी मॉडलिंग परिणामों में मौजूद रहते हैं. ये अंतर घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के बीच उत्पन्न परिणामों के कारण भी होते हैं. लिखित रिपोर्टों में दर्शाया गया है कि राष्ट्रीय मॉडलिंग संबंधी प्रयास **2030** में भारत के संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय अध्ययनों की तुलना में कहीं अधिक बेसलाइन उत्सर्जन का स्तर प्रक्षेपित करते हैं. संभवतः ये राष्ट्रीय अध्ययनों द्वारा प्रयुक्त **GDP** की उच्चतर वृद्धि से संबद्ध हैं. इसके अलावा राष्ट्रीय ज्ञान केंद्रों की दृष्टि से लगाये जाने वाले अनुमानों और परिणामों को अक्सर अंतर्राष्ट्रीय अध्ययनों में सामने नहीं रखा जाता है. इससे नीति-निर्माण में उनके महत्व पर सवाल उठाये जा सकते हैं.

परिणामों और अनुमानों में आने वाले इस विचलन के आधार पर हम नीति-निर्माण के लिए प्रामाणिक आँकड़े कैसे निकाल सकते हैं**?** ऐसी स्थिति में ऊर्जा और जलवायु नियोजन के प्रति वैकल्पिक रुख यहाँ अधिक सहायक हो सकता है. पहला घटक तो यही होगा कि बहुत सोच-विचार के साथ और खुली प्रक्रिया के माध्यम से एक ऐसा मज़बूत विश्लेषक बेस बनाया जाए**,** जिसके इनपुट**,** संवेदनशीलता और कार्यपद्धतियाँ पारदर्शी हों. चूँकि मॉडलिंग के परिणाम राष्ट्रीय स्तर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया के मूल में होते हैं**,** इसलिए किसी एक मॉडल के आधार पर निर्धारित बेस संबंधी दिशा-निर्देशों की अपनी सीमाएँ हो सकती हैं. यह देखना भी ज़रूरी होगा कि कोई भी मॉडल या परिदृश्य अपने-आपमें पूर्ण नहीं होता और कहीं वह अपने ही ढंग के अनुमानों और मॉडल टाइप निहितार्थों का शिकार तो नहीं है. इसके बजाय परिणामों की विश्वसनीयता इस बात पर निर्भर रहती है कि उसकी प्रक्रिया में कितनी पारदर्शिता रही है और स्पष्ट और उचित अनुमान निकालने में यह प्रक्रिया कितनी कारगर रही है.

कठोर विश्लेषक बेस बनाने के लिए दूसरा घटक भी उतना ही महत्वपूर्ण है और वह है मॉडल के परिणामों को सबल बनाने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में की जानेवाली कार्रवाई पर विचार-विमर्श करना. इसके साथ-साथ ही

विभिन्न संस्थाओं की क्षमताओं और भूमिकाओं के कार्यान्वयन और उपयोगी विश्लेषण का सवाल भी जुड़ा है ताकि क्षेत्रीय योजनाओं को राष्ट्रीय स्तर तक ले जाया जा सके. भारतीय ऊर्जा-जलवायु संबंधी मौजूदा अध्ययनों की तुलनात्मक समीक्षा से पता चलता है कि अब तक क्षेत्रीय कार्रवाई और उसके कार्यान्वयन के सवाल पर बहुत कम ध्यान दिया गया है.

अंततः अध्ययनों को सह-लाभ ढाँचे के रूप में संचालित किया जाना चाहिए, जैसा कि जलवायु-परिवर्तन की समस्याओं के प्रभावी रूप में समाधान के लिए सह-लाभ प्राप्त करते हुए ऐसे उपाय करने के लिए जिनसे विकास के लक्ष्य को भी हासिल किया जा सके, 12 वीं पंचवर्षीय योजना में जलवायु- परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्रवाई और अंतःशासकीय जलवायु- परिवर्तन पैनल द्वारा सह-लाभ ढाँचे को अपनाया गया है. भारत के ऊर्जा नियोजन के बहुमुखी और समान रूप से महत्वपूर्ण लक्ष्यों को हासिल करने के लिए इस ढाँचे का आधार बहुत मज़बूत है. ये लक्ष्य हैं, विकास, ऊर्जा सुरक्षा, सामाजिक-पर्यावरण संबंधी लक्ष्य (सार्वजनिक स्वास्थ्य सहित) और कार्बन संबंधी वैचारिक मुद्दे. हालाँकि कुछ मौजूदा अध्ययनों में सह-लाभ ढाँचे की चर्चा नहीं है, लेकिन अब तक सह-लाभ की कोई मात्रा हमारे सामने नहीं आई है.

ऐसी ही सोच और दृष्टिकोण को अपनाकर भारत अधिक विकसित अर्थव्यवस्था की ओर अग्रसर हो सकता है, ऊर्जा संबंधी अपनी मौजूदा चुनौतियों का सामना कर सकता है और जलवायु परिवर्तन की अनिश्चित स्थितियों से निबटने के लिए अपेक्षित कार्रवाई कर सकता है. भारत **INDC** अर्थात् "राष्ट्रीय तौर पर अपेक्षित निर्धारित योगदान" की तैयारी की यह सूचना संयुक्त राष्ट्रसंघ को भी दे सकता है. इस शिखर वार्ता ने हमें एक ऐसा अवसर प्रदान किया है ताकि हम कठोर ऊर्जा नियोजन के लिए देश की नीति पर पुनर्विचार कर सकें.

राधिका खोसला नई दिल्ली स्थित नीति अनुसंधान केंद्र में फ़ैलो हैं. इस लेख में दिये गये विचार उनकी वर्तमान परियोजना का ही हिस्सा हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार
<malhotravk@gmail.com> / मोबाइल : 91+9910029919